47.	डॉ. गोरख प्रभाकर काकडे	साहित्य, समाज का नैतिक दायित्व एवं संवैधानिक मूल्य	184
48.	डॉ. शहेनाज अहेमद शेख	हिंदी उपन्यासों में साम्प्रदायिकता विरोधी दृष्टिकोण	188
49.	श्री. हिरामण देवराम टोंगारे	हिंदी कथा साहित्य में स्त्री विमर्श	193
50.	डॉ. विरनाथ पांडूरंग हुमनाबादे	हिंदी नाट्य साहित्य एव संवैधानिक मूल्य	197
51.	प्रा डॉ विश्वनाथ किशनराव भालेराव	हिंदी साहित्य में संवैधानिक मूल्यों की अभिव्यक्ति	200
52.	डॉ. मृगेंद्र कुमार राय श्रीमती गौतमी अनुप पाटील	लक्ष्मीनारायण लाल के नाटकों में अभिव्यक्त संवैधानिक मूल्य (रक्त कमल , एक सत्य हरिश्चंद्र एवं गंगामाटी नाटक के विशेष संदर्भ में)	204

Aayushi International Interdisciplinary Research Journal
ISSN 2349-638X
www.aiirjournal.com

हिंदी उपन्यासों में साम्प्रदायिकता विरोधी दृष्टिकोण

शोधलेखक
डॉ.शेख शहेनाज अहेमद
असोसिएट प्रोफेसर
हिंदी विभाग प्रमुख
हु.जयवंतराव पाटील महाविद्यालय
हिमायतनगर नांदेड (महाराष्ट्र)

भारतीय इतिहास में विभाजन एक बड़ी त्रासदी है, जिसके परिणाम आज भी भयावह रूप में उद्वेसित करते है।इस विभाजन से उपजे साम्प्रदायिक वातावरण ने मानवीय ममूल्य ही बदल गए। आजादी के बाद सोंचा गया था कि हमारा देश विभाजन की त्रासदी से बाहर निकलकर धीरे-धीरे सामाजिक सद्भाव की ओर आगे बढ़ेगा, पर संकीर्ण मानसिकता के चलते ऐसा हो नही पाया। देश विभाजन ने पूरे उत्तर भारत को साम्प्रदायिकता की ज्वाला में धकेल दिया।

समाज में जो घटित हो चुका है या घटित हो रहा है, उसके दबाव को इतिहास आज तक भूगत रहा है। साम्प्रदायिकता जैसी अपराधी सोंच ने मानवीयता और मैत्री की नींव को झकझोर दिया है। कट्टरवादी सोंच ने भाषा को भी साम्प्रदायिक दायरे में लाकर खड़ा कर दिया है। इसका परिणाम यह हो रहा है कि मजहब अपने मूल आदर्शों से भटक जाता है। उपन्यासकारों ने साम्प्रदायिकता के कारण होने वाले दुष्परिणामों को सामने रखकर पाठक वर्ग की आँखो खोलने का प्रयास किया है।

वर्तमान भारत में भूमंडलीकरण के चलते ऐसी कल्पना की जा रही है, जहां संपूर्ण विश्व के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक हित साझा होंगे, पर इन सबके बावजूद जातिवाद, भाषावाद, क्षेत्रवाद तथा संप्रदायवाद की जड़े, उत्तरोत्तर गहरी होती जा रही है। देश-विभाजन के समय भारत में अनेक स्थानों पर सांम्प्रदायिक दंगे हुए, जिससे जान-माल की भारी क्षति हुई, हिंदू और मुसलमानों की दिलों में नफ़रत की ऐसी भावना घर कर गयी कि आज भी यदा-कदा छोटे-बड़े साम्प्रदायिक दंगों के रूप में प्रकट होती रहती है। हालाकि भारतीय संविधान लागू होने के बाद भारत धर्म और जाति निरपेक्ष राष्ट्र बन गया, पर साम्प्रदायिकता की समस्या अभी तक ज्यों की त्यों बनी हुई है।

साम्प्रदायिकता के इस भयानक रूप ने साहित्यकारों को भी हिला कर रख दिया। उन्होंने विभाजन के दिनों में ही नही बल्कि तब से लेकर आज तक इस विषय पर लिखते ही आ रहे है। यह विषय आज तक लगातार प्रासंगिक बना हुआ है। सिर्फ हिंदी के ही साहित्यकारों ने इस विषय पर प्रकाश डाला ऐसी बात नही, बल्कि उर्दू के भी अनेक साहित्यकारों ने इस विषय पर अपनी लेखनी चलायी।

हिंदी में यशपाल, कमलेश्वर, राही मासूम रजा, भीष्म साहनी, मंजूर एहतेशाम, अब्दूल बिस्मि'ाह, नासिरा शर्मा, अल्का सरावगी, विभूति नारायण राय, दूधनाथ सिंह, बदीउज्जमा, भगवान सिंह, रवींद्र वर्मा, काशीनाथ सिंह, उर्दु में अमृतलाल नागर, अमृतलाल मदान, गितांजली श्री, प्रताप सहगल, इंतजार हुसैन, सलाम आजाद, शौकत सिद्दीकी, कुर्रतुल ऐन हैदर, अब्बूसमद आदि ने विभाजन की त्रासदी झेलनेवाले अनेक परिवारों की कथा के माध्यम से साम्प्रदायिकता की त्रासदी को समझाने का सफल प्रयास इन उपन्यासकारों ने किया है। "यह एक भीषण और अमानवीय त्रासदी थी, जिससे उपजी सांम्प्रदायिकता को हिंदी और उर्दु के उपन्यासकारों ने अपने उपन्यास का विषय बनाया"1

समाज और साहित्य का संबंध एक दूसरे के लिए पूरक है। साहित्य समाज का दर्पण होता है। समाज में जो घटित होता है साहित्य उसी के नुसार निर्मित होता है। तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था से प्रभावित होकर साहित्यकार अपनी रचनाओं का सृजन करता है। समाज में जो व्याप्त होता है उसकी निरंतरता हर कृति में एकसी नही होती। साहित्य परिवर्तन के साथ समाज व्यवस्था में भी बदलाव आता रहता है। इन सारी सामाजिक व्यवस्थाओं को साहित्यकार अपनी रचना में सांकेतिक रूप मे समाविष्ट करता है। साहित्य की अनेक विधाएँ है, इन विधाओं में उपन्यास महत्वपूर्ण विधा है। "समाज में घटित घटनाओं का अत्यंत सजग बोध उपन्यास के द्वारा मिलता है। इस सजग बोध व बोध वृत्ति से मनुष्य की बौद्धिकता या चेतना व्यापक हो जाती है।"2 "मनुष्य सामाजिक प्राणी है, इसलिए कुछ सामाजिक व्यवस्थाओं मे अर्थात जातीय, नैतिक, शैक्षणिक आदि सामाजिक व्यवस्थाएँ शामिल हो जाती है, इन सामाजिक व्यवस्थाओं का जिक' न करने से साहित्य रचना अधुरी रह जाती है।"3

आज साम्प्रदायिकता के अनेक चेहरे हमारे सामने विद्यमान है। इतिहास वोध से पता चलता है कि साम्प्रदायिकता के बीज मध्यकाल में ही बोये गये थे और उन्हें फलने-फूलने का अवसर बि'टिश शासन व आज की राजनीतिक व्यवस्था ने दिखा। मध्यकाल में लुटमार, मारकाट हिंसा हुई पर अँग'ेजो ने हमाररी कमजोरी का फायदा उठाकर हमारी एकता को नष्ट किया। 1984 का सिक्ख विरोधी दंगा, आयोध्या विवाद, 1988-89 का साम्प्रदायिक तनाव, 192 में बाबरी मस्जिद का ध्वंस, गुजरात दंगा, 1993 का मुंबई बॉम्ब ब्लाट आदि जैसो साम्प्रदायिकता का एक लंबा और भयानक सिलसिला जारी है। यह साम्प्रदायिकता सिर्फ हिंदू-मुसलमानों तक ही सिमित नही रही बल्कि बौध्द-ब'ाम्हण, शैव-वैष्णव के बीच संघर्षो की लम्बी परंपरा इतिहास में मौजूद है। आज हम देश में जिस साम्प्रदायिकता को देख रहे है, यह राष्ट्रवाद के चिंतन के साथ उभरा है तथा इसके अनेक पहलू है। भले ही साम्प्रदायिकता को धार्मिक रूप में रखने की कोशिश की जाती है, लेकिन इसके निहितार्थ राजनीतिक व सामाजिक है।

अमानवीयता के हर मुद्दे का प्रतिरोध करना साहित्यकार का समाज के प्रति दायित्व बन जाता है, जिसे साहित्यकार कथा साहित्य के माध्यम से पाठकोे को जागरूक करने का धर्म निभा रहे है। प्रेमचंद कहते है, "जो कुछ असुंदर है, अभद्र है, मनुष्यता से रहित है, वह उसके लिए असह्य हो जाता है। उसपर वह शब्दों और भावों की सारी शक्ति से वार करता है। यों कहिए कि वह मानवता दिव्यता और भद्रता का ताना बांधे होता है। जो दलित है, पीडित है, वंचित है - चाहे वह व्यक्ति हो या समूह - उसकी हिमायत और वकालत करना उसका फर्ज है।"4

हिंदी के जाने माने साहित्यकार जिसने प्रेमचंद की परम्परा को अबाधित आगे बढ़ाया ऐसे महान लेखक यशपाल ने अपना उपन्यास 'झूठा सच' में देश की आजादी के बाद देश के बंटवारे के परिणामस्वरूप उपजी साम्प्रदायिक हिंसा की त्रासदी का बहुत सजीव और दहलाने वाला चित्रण किया है। इसी प्रकार भीष्म साहनी ने 'तमस' में उन परिस्थितियों और कारणों का विश्लेषण अंकित करने का प्रयास किया, जो देश के विभाजन और साम्प्रदायिकता के मूल में थे। उनका मानना है कि साम्प्रदायिकता की आग फैलाने का कार्य बि'टिश शासन और पिट्टूओं ने किया था, और वह एक बनी-बनाई योजना का अंग था।

कमलेश्वर ने अपने उपन्यास लौटे हुए मुसाफिर में पाकिस्तान के नाम पर छले गए मुसलमानों के मोहभंग का अंकन किया है। राही मासूम रजा ने आधा गाँव में स्वतंत्रता प्राप्ति के समय हुए साम्प्रदायिक दंगों का भारतीय समाज, विशेषतया मुसलमानों के जीवन प पड़े प्रभावों का विशद रूप मे चित्रण किया है। विभूति नारायण राय के उपन्यास 'शहर में कर्फ्यू' का शहर अपनी-अपनी आबादी के हिसाब से हिंदुस्तान और पाकिस्तान मं तब्दील होे जाता है। जिस क्षेत्र में हिंदू अधिक थ वह इलाका हिंदुस्तान और जहां मुस्लिम अधिक थे वह इलाका पाकिस्तान जैसा बन जाता है। ऐसे में संघर्ष की तमाम परिस्थितियाँ उपजती है। एक

कर्फ्यू किस तरह लोगों की जिंदगी बदल देता है। इसी कर्फ्यू के कारण इलाज न होने से सईदा जैसी माओं की बेटियों की मृत्यु हो जाती है। कर्फ्यू से सबसे अधिक अगर किसी का नुकसान होता है तो वह है रोज कमाने और रोज खानेवाला मजदूर और कामगार वर्ग, जिसके यहां कर्फ्यू लगने से भूखों मरने की नौबत आ जाती है।

उसी तरह कमलेश्वर ने अपना दूसरा उपन्यास 'कितने पाकिस्तान' में भी साम्प्रदायिकता विरोधी दृष्टिकोण को चित्रित किया है। जो धर्म, राजनीति, देश, दुनिया और मानवता को बांटने, एक-दुसरे से अलग और लहूलुहान करने की दानवी प्रवृत्ति को और उसके प्रतिरोध का अंकन किया है। यशपाल ने झूठा सच के अलावा 'मेरी तेरी उसकी बात' उपन्यास में हिंदुओं और मुसलमानों के गहन भावात्मक, सौदार्हपूर्ण संबंध और राजनीतिक कारणों से उस विघटन का चित्रणा, धर्म परिवर्तन कर ईसाई बने परिवारों की मानसिकता और मुस्लिम समाज की सामाजिक मानसिक बनावट का अंकन किया है।

दूधनाथ सिंह के 'आखिरी कलाम' में कथा की पृष्ठभूमि में बाबरी मस्जिद का विध्वंस है। यह उपन्यास राम जन्मभूमि में घटी घटनाओं को केंद्र में रखता है। इसमें भारतीय समाज में बढ़ती साम्प्रदायिकता का सामायिक चित्रण करते हुए उपन्यासकार ने धर्म के ठेकेदारों और राजनेताओं द्वारा फैलाई जा रही घृणा, भेदभाव, और वैमनस्यता का सजीव चित्रण किया है। स्वतंत्रता संग्राम में राष्ट्रीय जागरण में सबसे आगे रहनेवाली मीडिया ही आज भूमंडलीकरण एवं साम्प्रदायिकता के दौरे में अपना स्वार्थ साधने के लिए राष्ट्रीय एकता को ताड रही है। प्रफु कोलयान जी ने एक जगह लिखा है - "साम्प्रदायिकता और जातीवाद की चपेट का असर जगह है। दल और गिरोह की सत्ता अलग अलग नही है। कभी दल गिरोह जैसा व्यवहार करता है तो कभी गिरोह दल के रूप में सज धजकर सामने अलग आता है। हमारा समाज एक तरह से सामाजिक अपराध से लिप्त समाज बनता जा रहा है।"5

सन 6 दिसंबर 1992 में रामजन्म भूमि के नाम पर बाबरी मस्जिद का जो ध्वंस हुआ यह राजनीतिज्ञों की रणनीति का फलित है। यह साम्प्रदायिक सोंच की परिणति है। बाबरी मस्जिद की घटना एम धर्म विशेष के विरूध्द छेड़ा गया जिसके कारण साम्प्रदायिक दंगे हुए। "बाबरी मस्जिद का ध्वंस मात्र एक अपराध या बर्बर काम नही था, वह भारतीय संविधान के धर्मनिरपेक्ष ढांचे को ढाने की कोशिश करनेवाला नृशंस कृत्य था।"6 इसी बाबरी मस्जिद के ध्वंस की समस्या को रवींद्र वर्मा जी ने अपने उपन्यास 'निन्यानवें' में चित्रित किया है। दो लड़िकियों के मिट्टी की मस्जिद बनाकर गिराने संबंधी एतराज के माध्यम से बयान किया है। दो लड़कियों के मस्जिद संबंधी एतराज पर उनकी पिटाई अन्य लड़कियों से होती है तो शिकायत प्रिन्सिपल तक पहुँचती है। प्रिन्सिपल का सोना राजनितिज्ञों के मौन का प्रतीक है। इस उपन्यास में बो का कहना है-"जनता क्या चाहती है, बो कहता है यह खबर हमें नेता देते है। असल में जब वे कहते है कि जनता मंदीर चाहती है तो उसका मलतब होता है कि नेता मंदिर चाहते है यह राजनीति है।"7 काशीनाथ सिंह ने भी 'काशी का अस्सी' में मस्जिद को उठाया है। इसमें व्यंग्य की दृष्टिसे राजनीति से संबंधित तथ्यों को उजागर किया है। अयोध्या के तमाशे का उेख देखिए-"अगर पाकगाम बनाइए तो कार सेवा के बहाने हम भी तमाशा देखने आयोध्या चले। आयोध्या की तरफ जाने वालों में अस्सी के कारसेवक भी है, वे राम का नाम लेकर नेताओं के उपदेश सुनकर कुछ सोंचने से पहले अयोध्या की ओर आ रहे है उनके नारे देखिए -'रामलला हम आएंगे जुलूस के बोलने से पहले राय साहब का लाऊडस्पीकर बोलता मस्जिद वहीं बनाएगे। उधर से बच्चा राम का।"8

एक तरफ धर्म केंद्रित राजनीति का विभास रूप है तथा दुसरी तरफ धार्मिक सम्प्रदायों के भीतर रूढीवादी ताकतों का हिंसक रूप। भलेही धर्म के भीतर निहीत अध्यात्मिक चेतना मनुष्य की अनिवार्यता होती है, पर दुखद तथ्य यह है कि धर्म का पहले भी दुरूपयोग होता रहा है और आज भी हो रहा है। अँगेजों ने हिंदु और मुसलमानों के मन में वैमनस्य का बीज बोकर अपना लक्ष्य पा लिया। इस कारण इकबाल व वीर

सावरकर जैसे देशभक्त भी सम्प्रदाय के नाम पर बंट गये। उदाहरण के लिए "आप कौन, मै विनायक दामोदर सावरकर, पर आप तो राष्ट्रवादी थे, हिंदुत्ववादी नही। वह पाकिस्तान का इकबाल भी राष्ट्रवादी था, जिसने लिखा 'सारे जहां से अच्छा हिंदोस्तान हमारा' पर देखते-देखते इन्सान शैतान में बदल गया।"9 विभाजन संबंधी माउंटबैटन का वक्तव्य देखिए-"आखिर मैने उन्हे वही दिया है जो उन्होंने मांगा है। मैने विभाजन की जरूरत को पं.नेहरू, सरदार पटेल, आचार्य कृपलानी से मंजूर करवा लिया है।-अब उन्हें पाकिस्तान की निर्माण के ऐतिहासिक अवसर से पीछे नही हटना चाहिए।"10

अमृतलाल नागर ने 'पीढीया' उपन्यास में यह विभाजन राजनितिज्ञों की कपट मानसिकता का ही परिणाम बताया है। हिंदू महासभा के वीर सावरकर ने समान भाव में बंधे भारत की परिकल्पना को मृगतृष्णा के समान जताया है। अलका सरावगी जी ने 'कलिकथा वाया बाइपास' उपन्यास में बंगाल के राजनीतिक मतभेद का उल्लेख किया है। हिंदु व मुसलमानों के बीच का संघर्ष अतीत से चला आ रही समस्या है। अगस्त 1946 में कलकत्ता में प्रारंभ हुए दंगे ने आखिरकार देश और बंगाल के विभाजन पर एक तरह से मुहर लगा दी।

नासिरा शर्मा ने अपने उपन्यास जिंदा मुहावरे में साम्प्रदायिक स्थिति से उत्पन्न मानव चेतना का अंकलन सक्षम रूप में किया है। भारत आजादी के पूर्व विशेष तबके के मुसलमान नेताओं ने आम भारतीय मुसलमानों को यह कहकर समझाया कि नया बननेवाला पाकिस्तान तुम्हारे सपनों का देश होगा। मुसलमानों में यह डर पैदा हो गया कि बहुसंख्य जनता उनके मजहब और संस्कृति को क्षति पहुँचाएंगी। परिणाम यह हुआ कि उत्तरप्रदेश, बिहार, राजस्थान, गुजरात से मुसलमानों का पाकिस्तान के लिए प्रयाण शुरू हो गया है। बूढ़ो की जिंदगी असहाय हो गयी। लड़कियों की शादी मुश्किल हो गयी। मुसलमानों को वहां की जनता ने ह्रदय से नही अपनाया। इस प्रकार धर्मान्धता की विजय और मनुष्यता पराजित हुई। नासिरा शर्मा ने लिख है - "आज दोनों देशोंमें में रहनेवाली व जवान होते ही नस्लें बटवारे जैसी ऐतिहासिक घटना की चश्मदीद गवाह नही है मगर उनकी अनुगूंज न किये हुए गुनाह की प्रताड़ना बन बचपन से उनका पीछा करती उनके दिल व दिमाग पर फसाद और कटाक्ष के रूप में कोडे बरसाती उन्हें आत्मग्लानि के सरोवर में गर्दन तक डुबोती रही है।"11

नासिरा जी ने बंटवारे के बाद रह गये और पाकिस्तान चले गये मुसलमानों की वेदना सहानुभूति व संवेदना के साथ अंकित किया है।

इन सबके अलावा बदीउउजम्मा ने 'छाको की वापसी' में देश विभाजन के बाद बिहार से पूर्वी पाकिस्तान गए मुसलमानों के मोहभंग का चित्रण किया है। इसी तरह अमृतलाल मदान के 'सिंधुपुत्र', दीपचंद निमेर्हि के 'और कितने अंधेरे', हरदर्शन सहगल के 'टुटी हुई जमीन' द्रोणवीर कोहली के 'वाह कैंप' आदि उपन्यासों में देश विभाजन की त्रासदी और सांप्रदायिक दंगो से बचकर आए शरणार्थी परिवार की कथा कही गई है।

हिंदी के साथ ही उर्दु में साम्प्रदायिक समस्या को लेकर खूब लेखन हुआ है, जिसमें सलाम आजाद का 'टुटा मत'कुर्रतुलन हैदर का 'आग का दरिया', इंतजार हुसैन का 'बस्ती' अब्दुसमद का 'दो गज जमीन' अब्दुल्लाह हुसैन का 'उदास नसलें' शौकत सिद्दीकी का 'खुदा की बस्ती' विशेष है। विभाजन की त्रासदी में अनगिनत परिवार जो दर-दर भटकने को मजबूर हो गए और लाखों की संख्या में ऐसे लोग थे, जो अपनी जन्मभूमि, अपना परिवार, जमीन, जायदाद, नाम, प्रतिष्ठा, आदि छोड़कर जाने को बाध्य हो गये।

जीवनमूल्य हर युग में बदलते रहते है किंतु विभाजन ने हमारे मूल्यों व विश्वासों की जड़े हिला दी। विभाजन के बाद परिस्थितियों तेजी से बदलने लगी। एक तो जीवन प्रति प्रतिक्रिया तीव्र एवं संवेदनाए बहुतत गहरी थी। संसार में जहां जहां विभाजन हुआ वहां-वहां कभी न खत्म होनेवाली समस्याएँ दृष्टिगत हो रही है। यह विभाजन राजनीतिज्ञों की कपट मानसिकता की उपज है। साम्प्रदायिकता के नाम पर कई प्रकार की

भ'ाांतियां चल रही है। उपन्यासकारों ने नैतिक मूल्यों के ह्रास व धार्मिक खोकलेपन का उद्घाटन किया है। साहित्यकार इतिहास नहीं रचता बल्कि इतिहास में निहीत जिंदगी लिखता है। रचनाकार अपनी मन की भावनाओं अनुभवों विचारों से युक्त कृति का सृजन करता है ताकि जनता इस साम्प्रदायिक दलदल से निकलकर सच की पहचान करे और भारतीय संविधान की सुरक्षा करें।

संदर्भ :-

1) श्याम चरण दुबे, परम्परा, इतिहास बोध और संस्कृति
2) नंदकिशोर आचार्य - सर्जक का मन पृ.54.
3) मैनेजर पांडे - राष्ट्र और कर्म, पृ.37.
4) मूंशी प्रेमचंद
5) राम पुनियानी - साम्प्रदायिक राजनीति: तथ्य एवं मिथक पृ.14.
6) प्रफु' कोल'यान - हंस - जनवरी 2002 पृ.67.
7) रवींद्र वर्मा - निन्यानवें - पृ.185.
8) काशिनाथ सिंह - काशी का अस्सी
9) कमलेश्वर - कितने पाकिस्तान पृ.111.
10) कमलेश्वर - कितने पाकिस्तान पृ.111.
11) नासिरा शर्मा - जिंदा मुहावरे - पृ.62.
12) समीक्षा - जुलाई - सितम्बर 1979 - साहित्य बनाम सांप्रदायिकता.